Date:17-04-23

पर्यावरण का ध्यान जरूरी

संपादकीय

पंजाब में गेहूं की फसल की कटाई में तेजी आने के साथ ही किसानों की ओर से नाड़ को आग लगाने की घटनाओं का सामने आना चिंताजनक है। चाहे गेहूं हो या धान, फसल के अवशेष को खेत में जलाने से पर्यावरण को नुकसान होता है। इसके साथ ही जमीन की उपजाऊ शक्ति भी कम होती जाती है। यह ठीक है कि धान की पराली को आग लगाने की तुलना में नाड़ को जलाने से पर्यावरण को कम नुकसान पहुंचता है, लेकिन सवाल यह है कि अवशेष को आग लगाई ही क्यों जए। पर्यावरण का ख्याल तो हर किसी को रखना ही चाहिए और यह सभी की प्राथमिकता में होना चाहिए। जमीन के अंदर कई प्रकार के मित्र कीट और बैक्टीरिया होते हैं जो उपजाऊ शक्ति को बढ़ाने का काम करते हैं। आग लगाने से ये मर जते हैं। पंजाब कृषि विश्वविद्यालय के विज्ञानियों की इस सलाह को भी गंभीरता से लिया जाना चाहिए कि नाड़ को खेत में जोतने से जैविक कार्बन में वृद्धि होती है जो कि फसल के लिए काफी लाभदायक है। ऐसा करने से रासायनिक खादों की जरूरत भी कम पड़ती है और फसल की पैदावार में भी वृद्धि होती है। कुछ दिनों पहले वर्षा एवं ओलावृष्टि के बीच पंजाब कृषि विश्वविद्यालय की ओर से किए गए अध्ययन की रिपोर्ट में भी यह बात साबित हो चुकी है कि जिन किसानों ने धान की पराली को आग लगाने के बजय उसे कुतरकर खेत में मिला दिया था उनकी गेहूं की फसल मौसम की मार से बच गई। किसानों को इस पर ध्यान देना चाहिए। सरकार को भी किसानों को जागरूक करने के लिए समुचित प्रयास करने चाहिए।

Date:17-04-23

गुम होती राजनीतिक विचारधारा

राज कुमार सिंह, (लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

भारतीय राजनीति में खासकर चुनाव के वक्त विचारधारा की बातें बहुत सुनाई देती हैं, पर सत्ता के खेल में वह वास्तव में कहीं बची भी है? कर्नाटक विधानसभा चुनाव का परिदृश्य फिर एक बार इसी सच को रेखांकित करता है कि सत्ता के खेल में विचारधारा कहीं गुम होकर रह गई है। कर्नाटक विधानसभा चुनाव में सत्ता के तीनों दावेदार दलों के सेनापतियों की विचारधारा मूलत: एक ही होना क्या इसी सच का नवीनतम प्रमाण नहीं है?

विघटन की प्रक्रिया से गुजरते हुए जनता दल के आगे जैसे-जैसे कोष्ठक लगता गया, वह व्यक्तिकेंद्रित पारिवारिक दल बनता गया। कर्नाटक की राजनीति में किंगमेकर माना जा रहा जनता दल सेक्युलर भी उसी का प्रतीक है। वर्तमान जनता दल सेक्युलर का अर्थ पूर्व प्रधानमंत्री एचडी देवेगौड़ा के परिवार की राजनीति तक सिमट गया है, जिसका प्रतिनिधि चेहरा फिलहाल पूर्व मुख्यमंत्री एचडी कुमारस्वामी हैं, पर मूल जनता दल की बात करें, जो बोफोर्स बवंडर के जरिये वर्ष 1989 में केंद्र में सत्ता परिवर्तन का वाहक बना था तो पूर्व कांग्रेसी मुख्यमंत्री सिद्दरमैया और मौजूदा भाजपाई मुख्यमंत्री बासवराज बोम्मई ने भी अपना राजनीतिक सफर उसी से शुरू किया था। बोम्मई के पिता एसआर बोम्मई कर्नाटक के मुख्यमंत्री ही नहीं, जनता दल के राष्ट्रीय नेता भी रहे। सिद्दरमैया की गिनती भी तब कर्नाटक जनता दल के बड़े नेताओं में होती थी। जाहिर है, एक ही राजनीतिक विचारधारा से निकले तीन नेता आज अलग-अलग ही नहीं, बल्कि चुनावी प्रतिद्वंद्वी दलों के प्रतिनिधि के रूप में अगली सरकार के गठन के लिए जनादेश भी मांग रहे हैं।

बताया जा रहा है कि देश-प्रदेश की भलाई के लिए अमुक विचारधारा की जीत और दूसरी विचारधाराओं की हार जरूरी है, पर क्या यह वैचारिक राजनीतिक जंग है? इन नेताओं और इनके दलों का जवाब होगा-हां, यह वैचारिक लड़ाई है, पर कटु सत्य यही है कि सिद्दरमैया और बासवराज बोम्मई, दोनों का ही जनता दल से अलगाव राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं के टकराव के चलते हुआ। सबसे बड़े दल भाजपा को केंद्र की सत्ता से बाहर करने के लिए साल 1996 में किए गए कांग्रेस समर्थित संयुक्त मोर्चा सरकारों के प्रयोग में प्रधानमंत्री रहने के बाद एचडी देवेगौड़ा का कद इतना बड़ा हो गया कि कर्नाटक में जनता दल उनके परिवार के दायरे में सिमटता चला गया। ऐसे में किसी भी अन्य नेता के लिए देवेगौड़ा के पुत्र एचडी कुमारस्वामी के नेतृत्व में राजनीति करने से आगे कोई संभावना बची ही नहीं। ध्यान रहे कि जनता दल सरकारों में दो बार उपमुख्यमंत्री रह चुके सिद्दरमैया को मुख्यमंत्री बनने के लिए कांग्रेस का हाथ थामना पड़ा। यह भी विचारधारा के राजनीतिक संकट का ही प्रमाण रहा कि दशकों तक देश-प्रदेश पर एकछत्र राज करने वाली कांग्रेस को कर्नाटक की सत्ता में वापसी के लिए जनता दल के खेमे में रहे नेता की ताजपोशी करनी पड़ी।

भाजपा के उभार के बाद जनता दल तीसरे स्थान पर खिसक गया, पर लिंगायत, वोक्कालिगा और कुरुबा सरीखे प्रभावशाली समुदायों और उनके मठों के प्रभाव वाली कर्नाटक की जमीनी राजनीतिक वास्तविकता आज भी यही है कि वह तीन ध्रुवों में बंटी है। जनता दल सेक्युलर तीसरा छोटा ध्रुव है, पर सत्ता संतुलन की चाबी उसी के पास मानी जाती है। यही कारण है कि पिछले विधानसभा चुनाव में भाजपा के बहुमत के आंकड़े से पिछड़ जाने पर कांग्रेस ने अपने से आधे विधायकों वाले जनता दल सेक्युलर के नेता कुमारस्वामी को मुख्यमंत्री बना दिया। यह अलग बात है कि येदियुरप्पा ने साल बीतते-बीतते गठबंधन में सेंध लगाते हुए सत्ता में अपनी वापसी का मार्ग प्रशस्त कर लिया। लिंगायत नेता

येदियुरप्पा को अपने दूसरे मुख्यमंत्रित्वकाल के दो वर्ष पूरे होने पर जुलाई, 2021 में जब बढ़ती उम्र के चलते सत्ता छोड़नी पड़ी तो भाजपा को भी उनका विकल्प पूर्व में जनता दल के नेता रहे बासवराज बोम्मई में ही नजर आया।

जाहिर है, अब चुनाव प्रचार में ये नेता अपने-अपने दल की कथित विचारधारा का ही गुणगान करते हुए वोट मांगेंगे, पर क्या राजनीतिक विचारधारा किसी आइपीएल फ्रेंचाइजी टीम की ड्रेस की तरह है कि जो मालिक और सत्र के साथ आसानी से बदली जा सकती हो? जनता दल का गठन मूलत: कांग्रेस की परिवारवादी और भ्रष्ट राजनीति के विरोध में हुआ था, जो सत्ता और संसाधनों के विकेंद्रीकरण में विश्वास रखने वाली समाजवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करता था। फिर भला कोई जनता दली रातोंरात कांग्रेसी कैसे बन सकता है? हालांकि भाजपा और उसकी पूर्ववर्ती जनसंघ ने दशकों तक समाजवादी धारा के साथ मिलकर गठबंधन राजनीति की, पर वैचारिक तौर पर तो कांग्रेस-विरोध की समानता के अलावा वह उनसे बहुत अलग ही रही है। फिर ऐसा क्यों है कि जनता दल की राजनीतिक-वैचारिक पृष्ठभूमि वाले नेता में उसे अपना नेतृत्व भी नजर आने लगता है? बेशक केवल सिद्दरमैया और बासवराज बोम्मई ही नहीं हैं, जो अपनी सत्ता की महत्वाकांक्षा पूरी करने के लिए लगभग विपरीत राजनीतिक ध्रुव में रच-बस गए। ऐसे नेताओं की सूची बहुत लंबी बन सकती है, जिन्होंने सत्ता की खातिर एक नहीं, अनेक बार दल बदले हैं। क्या उनके संदर्भ में विचारधारा की चर्चा ही हास्यास्पद नहीं लगती? ऐसे नेताओं के चलते ही विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र की राजनीति को कई तरह की उपमाएं दी जाने लगी हैं, जो उसका मान तो कतई नहीं बढ़ातीं। इसलिए दलों और नेताओं से यह सवाल तो पूछा ही जाए कि आपकी कैसी विचारधारा है, जो सत्ता की धारा में बड़ी सहजता से गुम होती दिख रही है?

Live हिन्दुस्तान.com

Date:17-04-23

...तो अतीक का यह न होता अंजाम

विभूति नारायण राय, (पूर्व आईपीएस अधिकारी)

मेरी इस स्वीकारोक्ति से आपको ताज्जुब जरूर होगा, पर यही सच है कि मैं दोहरी जिंदगी जीता रहा हूं 35 साल मैंने आजीविका के लिए खाकी कपड़े पहने, पर साथ में लेखक भी बना रहा। लिखना पढ़ना तो आईपीएस में आने के पहले से था । व्यस्त नौकरी में भी बना रहा और रिटायरमेंट के बाद तो अब यही है। पुलिस ऐसा पेशा है, जिसमें भांति-भांति के लोगों से आपका साबका पड़ता रहता है और मानव मन या मनोविज्ञान के छात्र के लिए खास तरह के लोगों के चेहरों पर आने-जाने वाले भाव पढ़ना रचनात्मक अनुभव हो सकता है।

मेरे सामने जब कोई अपराधी आता था, तब उसे पता ही नहीं चलता

था कि कब वह मेरी दिलचस्पी का विषय बन गया। मुझे उसके शरीर में आंखें सबसे 'अधिक आकर्षित करती थीं। उसकी आंखों में क्षण भर के लिए कौंधने वाली चमक में छिपी घृणा, क्रोध, भय या प्रेम जैसी भावनाओं को मैं फौरन पकड़ सकता था। उनकी कथाएं, उनमें निहित लालच व प्रतिशोध की गाथाएं मुझे आकर्षित करती थीं। मेरे अंदर का लेखक उनका लाभ उठाता था। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के एक माफिया को तीन वर्ष तक करीब से देखने का मौका मिला और मैंने एक उपन्यास उस पर लिख डाला।

अभी जब मैंने अतीक अहमद की हत्या के बारे में सुना, तो मुझे बहुत-सी चीजें अनायास याद आ गई। वह भी किसी भी लेखक के लिए चुनौती हो सकता था। उसकी आंखों में पसरी निर्लिप्तता से आप नहीं भांप सकते थे कि उसके मन में क्या चल रहा है। मैं 1990 में आज के प्रयागराज और उन दिनों के इलाहाबाद का वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक या एसएसपी नियुक्त हुआ था और जाते ही मुझे उसके बारे में पता चला था। मेरे वहां पहुंचने के चंद महीने पहले वह निर्दलीय विधायक बना था और उसने इस राजनीतिक यात्रा की शुरुआत ही अपने प्रतिद्वंद्वी चांद बाबा की हत्या से की थी। चांद बाबा कॉरपोरेटर था और एक खूंखार बमबाज के रूप में उसकी कुख्याति थी। उसके मरते ही अतीक इलाहाबाद के अपराध जगत का बेताज बादशाह बन गया और इलाहाबादी भाषा में उसकी हनक कायम हो गई। फिर शुरू हुआ वह सफर, जिसमें उसने अकूत संपदा जुटाई, पांच बार विधायक बना और एक बार फूलपुर की उस सीट से लोक सभा का सदस्य बन गया, जिसका पहले कभी तीन आम चुनावों में देश के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने प्रतिनिधित्व किया था। यह भारतीय राजनीति का वह विद्रूप है, जिससे हम रोज दो-चार होते रहते हैं।

पहली बार अतीक निर्दलीय चुना गया था, पर उन दिनों के मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव अल्पमत में थे और उन्हें उसके समर्थन की जरूरत थी। उसने उनका समर्थन किया और उसकी भरपूर कीमत वसूल की। बाद में तो वह उनकी पार्टी में शरीक हो गया और कई चुनावों में उनके टिकट पर जीता। जब कभी समाजवादी पार्टी ने मना किया, किसी दूसरे दल ने उसे टिकट दे दिया। उसका भाई अशरफ भी एक बार विधायक चुना गया। दोनों भाइयों के राजनीतिक पराभव की शुरुआत तब हुई, जब अशरफ को एक चुनाव में राजू पाल ने हरा दिया और अशरफ ने बड़े नृशंस तरीके से उसे दिन दहाड़े मार गिराया। इस घटना ने इलाहाबाद की अंतरात्मा को झकझोर दिया था और उसके बाद दोनों भाइयों की चुनावी राजनीति को ग्रहण लगना शुरू हो गया। वे चुनाव हारने लगे, पर इसके बाद उनका आपराधिक कैरियर अपने नए उरूज पर पहुंचा। अपने आतंक के बल पर उन्होंने धड़ाधड़ जमीनें और मकान कब्जियाना शुरू कर दिया। उनके दुस्साहस की हद समझने के लिए एक ही उदाहरण काफी है। श्रीमती गांधी परिवार से जुड़े एक व्यक्ति की सिविल लाइंस की संपत्ति लगभग हड़प ही ली गई होती, अगर नई दिल्ली से हस्तक्षेप न हुआ होता।

खैर, अपनी नियुक्ति की शुरुआत में ही मेरा उससे सामना हो गया था। उसने हमारे एक सब-इंस्पेक्टर के साथ अभद्रता की और मैंने फैसला किया कि उसके गया। दोनों भाइयों के राजनीतिक पराभव की शुरुआत तब हुई, जब अशरफ को एक चुनाव में राजू पाल ने हरा दिया और अशरफ ने बड़े नृशंस तरीके से उसे दिन दहाड़े मार गिराया। इस घटना ने इलाहाबाद की अंतरात्मा को झकझोर दिया था और उसके बाद दोनों भाइयों की चुनावी राजनीति को ग्रहण लगना शुरू हो गया। वे चुनाव हारने लगे, पर इसके बाद उनका आपराधिक कैरियर अपने नए उरूज पर पहुंचा। अपने आतंक के बल पर उन्होंने धड़ाधड़ जमीनें और मकान कब्जियाना शुरू कर दिया। उनके दुस्साहस की हद समझने के लिए एक ही उदाहरण काफी है। श्रीमती गांधी परिवार से जुड़े एक व्यक्ति की सिविल लाइंस की संपत्ति लगभग हड़प ही ली गई होती, अगर नई दिल्ली से हस्तक्षेप न हुआ होता।

खैर, अपनी नियुक्ति की शुरुआत में ही मेरा उससे सामना हो गया था। उसने हमारे एक सब-इंस्पेक्टर के साथ अभद्रता की और मैंने फैसला किया कि उसके खिलाफ कानूनी कार्यवाही की जाए। मैं और कलेक्टर कोतवाली में बैठ गए और हमने एसपी सिटी ओपी सिंह के नेतृत्व में पुलिस बल उसे गिरफ्तार करने के लिए भेज दिया। उस रात जो नाटक घंटों चला, उसमें राज्य की कई संस्थाएं बेनकाब हुईं। स्वाभाविक है, लोकतंत्र में राजनीतिक नेतृत्व का निर्णय सर्वोपरि होता है, लिहाजा कई घंटों की जद्दोजहद के बाद अतीक का घर घेरकर बैठे पुलिस बल को वापस बुलाना पड़ा था। कई लोगों का मानना है कि अगर उस रात कार्यवाही हुई होती, तो अतीक का कद इतना बड़ा नहीं हो पाता कि राज्य उसके सामने बौना नजर आने लगता।

माफिया को राजनीतिक संरक्षण मिलते ही उसकी महत्वाकांक्षाओं और उपलब्धियों को पर लग जाते हैं। वह किसी को भी खरीद सकता है या किसी भी प्रतिरोध को बलपूर्वक रौंदता हुआ आगे बढ़ सकता है। अतीक ने भी यही किया था। मेरा उससे संपर्क तो जल्द ही टूट गया, क्योंकि मैं इलाहाबाद से निकलकर भारत सरकार की सेवा में चला गया और दस साल तक राजस्थान से कश्मीर तक सेवा देते रहा, पर अपनी दिलचस्पी के चलते उसके उत्थान और पतन पर लगातार निगाहें रखे रहा और मुझे जानकर कोई आश्चर्य नहीं होता था कि वह कानून-कायदों को ठेंगे पर रखते हुए अकूत संपदा जुटाता जा रहा था। जेलों में रहकर भी उसका और उसके भाई अशरफ का दबदबा बरकरार रहा, बल्कि जेल के अंदर से उसने ज्यादा प्रभावी ढंग से अपने साम्राज्य का विस्तार किया।

आज जब राज्य पूरी तरह से उस पर टूट पड़ा, अप्रत्याशित रूप से उसका अंत बड़ा कारुणिक नजर आ रहा है। वह उसका भाई अशरफ और पांच में से एक बेटा असद अलग-अलग हालत में मारे जा चुके हैं, बीवी शाइस्ता परवीन भागी भागी फिर रही है, दो बड़े बेटे जेल में हैं और शेष दो नाबालिग सुधारगृह में। दरअसल अपराध की दुनिया ऐसी भूल-भुलैया की तरह है, जिसमें एक बार प्रवेश करने के बाद बाहर निकलने के रास्ते बहुत मुश्किल से मिलते हैं। अतीक भी एक बार उसमें घुसा और फिर उसके तिलिस्मी सम्मोहन मे फंसकर रह गया। जो उसका इस्तेमाल कर रहे थे, वे भी शायद नहीं चाहते थे कि वह इससे बाहर निकल आए। यह भी सच है कि खुद उसने या उसके किसी दुश्मन या चाहने वाले ने सपने में भी इतने भयानक अंत के बारे में कल्पना नहीं की होगी।

Date:17-04-23

ताइवान का संकट कहीं ज्यादा चिंता की बात

राहुल जैकब, (आर्थिक शोधकर्ता व वरिष्ठ पत्रकार)

अधिकतर कारोबार में 'रिस्क डाइवर्सिफिकेशन', यानी अलग-अलग क्षेत्रों में निवेश करके जोखिम कम करने की रणनीति अच्छी मानी जाती है। फिर भी, पिछले साल के अंत में, दुनिया की सबसे बड़ी सेमीकंडक्टर कंपनी-ताइवान सेमीकंडक्टर मैन्युफैक्चरिंग कॉर्प के प्रमुख मोरिस चांग ने अमेरिका में नए संयंत्र लगाने की योजना पर तेजी से आगे बढ़ने से अनिच्छा दिखाई। उनका कहना था, अब वैश्वीकरण और मुक्त व्यापार का कमोबेश मतलब नहीं है। हालांकि, चांग बखूबी जानते हैं कि बीजिंग यदि अपने इस पड़ोसी देश पर हमला करके और उसे हराकर चिप-निर्माण में सर्वेसर्वा बनता है, तो एरिजोना की यह फैक्टरी उनके लिए मददगार हो सकती है। कुछ इसी तरह की अदूरदर्शिता पिछले हफ्ते फ्रांस के

राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों ने भी दिखाई। ताइवान को लेकर उन्होंने कहा कि यूरोप को 'जाल' में नहीं फंसना चाहिए और उसे उस समस्या में नहीं उलझना चाहिए, जो उसकी नहीं है। चीन के टिप्पणीकारों ने मैक्रों की खूब तारीफ की है। वाकई, ताइवान पर तरस आता है। सिर्फ 2.4 करोड़ की आबादी और चीन की तुलना में बेहद कम सेना वाले इस देश को दुनिया भर का साथ चाहिए। बजाय इसके, वैश्विक नेतागण चीन के सुर में सुर मिला रहे हैं कि जीवंत लोकतंत्र नहीं होने के कारण ताइवान स्वतंत्र देश नहीं है।

हालांकि, ताइवान की घरेलू राजनीति में भी कई पेच हैं। वहां की राष्ट्रपति त्साई इंग-वेन बेहद बहादुर नेता हैं। उन्होंने अपनी हालिया अमेरिका यात्रा में बीजिंग द्वारा ताइवान के करीब बढ़ाए जा रहे सैन्य अभ्यास और चीनी लड़ाकू विमानों द्वारा ताइवानी हवाई सीमा के बार-बार किए जा रहे अतिक्रमण के खिलाफ उचित टिप्पणी की, लेकिन कमोबेश उसी वक्त विपक्षी कुओमिंतांग पार्टी (केएमटी) के नेता मा यिंग-जिओयू की चीन यात्रा ने सारे किए धरे पर पानी फेर दिया। वह 2008 से 2016 तक ताइवान के राष्ट्रपति रह चुके हैं, जब केएमटी सत्तारूढ़ थी। उन्होंने पश्चिमी ताकतों द्वारा अपने पिछले अपमान को याद करके चीन की बातों को ही दोहराया।

यह दरअसल ऐसा मसला है, जिसे चीन ने माओ से लेकर अपनी मौजूदा सरकार तक पाला-पोसा है। मगर राष्ट्रपति शी जिनपिंग की पश्चिम से विशेष नापसंदगी रही है। इसका सुबूत राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन के साथ एक शिखर बैठक में उनका रूस के साथ अपने गठबंधन को मजबूत करना है। साल 2009 में, राष्ट्रपति बनने से पहले मैक्सिको की अपनी यात्रा में शी जिनपिंग ने कहा था, 'कुछ अघाए विदेशी हैं, जिनको हमारे मामलों में उंगली उठाने से अच्छा कुछ नहीं लगता। मगर चीन न क्रांति निर्यात करता है, न गरीबी और न ही भूख, ताकि उनके लिए मुश्किलें खड़ी हों।' फिर भी, जब से शी जिनपिंग चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के मुखिया बने हैं, बीजिंग ने इन्फ्रास्ट्रक्चर-निर्माण के नाम पर कर्ज देने की नीति बनाई और कई विकासशील देशों को अपने जाल में फांस लिया।

बहरहाल, जिस तरह से भारत सहित तमाम पड़ोसी देशों के खिलाफ चीन आक्रामक रुख पर भरोसा करता है, ताइवान के बरअक्स भी वह पारंपरिक सेना लगातार बढ़ा रहा है। इसे सिर्फ इस उदाहरण से समझ सकते हैं कि चीन की नौसेना के पास 400 जहाज हैं, तो ताइवान के पास महज 26। द इकोनॉमिस्ट में छपी एक रिपोर्ट बताती है कि ताइवान की सेना द्वारा महंगे एफ-16 विमान खरीदने जैसे गलत कदम उठाने से यह सैन्य विषमता और बढ़ गई है, जबकि उसे एंटी-मिसाइल डिफेंस जैसे उपायों पर ध्यान देना चाहिए था।

इन्हीं सब कारणों से यह असंभव लगता है कि अगर ताइवान को अधीन करने की कोशिश होती है, तो वह यूक्रेन की तरह वीरता दिखाएगा। इतना ही नहीं, केएमटी अगले साल आम चुनाव जीत सकती है और मुमकिन है कि यहां भी हांगकांग की तरह शासन-व्यवस्था शुरू की जाए। ऐसे वक्त में, जब रूस-यूक्रेन संकट का चौतरफा असर पड़ा है, कुछ नेता ताइवान में भी ऐसी ही जंग में हाथ सेंकना चाहते हैं। मगर कहीं ज्यादा परेशानी की बात यह है कि ताइवान दुनिया भर में सेमीकंडक्टर निर्माण की धुरी है। करीब 90 फीसदी उन्नत चिप यहीं बनते हैं। ऐसे में, इस आसन्न भू-राजनीतिक संकट को लेकर हमें कहीं अधिक चिंता करनी चाहिए।